स्कूल में जेंडर-आधारित सीमाओं पर सवाल उठाना

निधि गुलाटी

स्कूल में बच्चे विभिन्न गतिविधियों जैसे प्रार्थना सभा, शारीरिक शिक्षा की कक्षाओं और भोजन के दौरान जेंडर के आधार पर लाइन बनाकर खड़े होते हैं। किसी भी कक्षा में एक ही नज़र में हमें बहुत स्पष्ट जेंडर-आधारित बँटवारा दिखाई दे जाता है। लड़के दरवाज़े के पास वाली क़तार में या पीछे की डेस्कों पर बैठते हैं और लड़कियाँ क्लास की भीतरी जगहों पर, दरवाज़ों से दूर लेकिन शिक्षकों के पास बैठती हैं। ये 'जेंडर क्षेत्र' हैं – जेंडर के आधार पर प्रतिबन्धित या आवंटित भौतिक या सामाजिक स्थान। ये 'सीमाबद्ध' स्थान, जिनकी पहचान ऐसे स्पष्ट विभाजन हैं जहाँ कुछ निश्चित क्षेत्रों या गतिविधियों पर किसी एक जेंडर का स्पष्ट प्रभुत्व होता है, बहुत टिकाऊ प्रतीत होते हैं। इन क्षेत्रों के आर-पार जाने वाली अन्तःक्रियाएँ बहुत ही सीमित होती हैं। ये क्षेत्र तब भी बने रहते हैं जबकि इनकी कोई व्यावहारिक ज़रूरत नहीं होती, जैसे कि लाइब्रेरी में दाख़िल होते वक्त जहाँ सभी बच्चे एक-एक, दो-दो की क़तार में शामिल हो सकते हैं। यह लेख ऐसे ही कुछ सवालों और सम्भावनाओं की गहराई में जाता है।

जेंडर-आधारित विभाजनों, रिवाज़ों और परिपाटियों में किस तरह हस्तक्षेप किया जा सकता है? एक बार हम इन परिपाटियों या व्यवहारों की पहचान कर लें तो हम इनमें बदलाव लाने की योजना बना सकते हैं। जेंडर-समावेशी स्थानों और व्यवहारों को किस प्रकार बढ़ावा दिया जा सकता है? स्कूलों को क्या करना चाहिए? जो स्कूल बच्चों को अलग-अलग करते हैं और उन्हें ऐसी भूमिकाएँ देते हैं जो पारम्परिक जेंडर-मानकों को बढ़ावा दें, वे रूढ़-छवियों (स्टीरियोटाइप्स) को बढ़ावा देते हैं, समर्थन देते हैं और उन्हें आगे बढ़ाते हैं। यह कठोर व्यवस्था लड़कियों को नेतृत्व करने से दूर रखती है और उन्हें देखभाल करने की भूमिकाओं में रख देती है। दूसरी ओर, लड़कों को आक्रामक रूप से प्रतिस्पर्धी होने की तरफ़ धकेला जाता है जो उनके मानसिक विकास और समानुभूति विकसित करने की क्षमता को प्रभावित करता है।

> जेंडर विभेदन का प्रभाव बहुत गहरा होता है : लड़कियाँ इस सन्देश को आत्मसात कर लेती हैं कि उनका मोल आज्ञा पालन और कर्मठता से बँधा हुआ है, जो उन्हें अपनी क्षमताओं को निरन्तर कम करके आँकने के लिए मजबूर कर देता है। इसके उलट लड़कों को यह बताया जाता है कि उनकी क्षमता नैसर्गिक होती है जिससे उनमें पात्रता और अनियंत्रित महत्त्वाकांक्षा की संस्कृति को बढ़ावा मिलता है। यह व्यवहार व्यक्तिगत आत्म-सम्मान और प्रेरणा को नुक़सान पहुँचाता है और अगली पीढ़ी को अपनी व्यक्तिगत व कामकाजी ज़िन्दगियों में इन पूर्वाग्रहों को दोहराने के लिए तैयार करता है। लड़के-लड़कियों, दोनों को ही अपनी सम्भावनाओं तक पहुँचने से रोकने वाले संरचनात्मक विषमता के इस दुष्चक्र से बचा नहीं जा सकता। चूँकि परिवार धीरे-धीरे बदलते हैं इसलिए स्कूलों को इस दुष्चक्र को तोड़ना होगा। तभी जाकर हर एक बच्चा डर, बन्धनों या उपहास के बिना विभिन्न क्षमताओं को खोजने के लिए समर्थ हो पाएगा। अगर स्कूलों में बदलाव नहीं होता तो हमें विवेचनात्मक ढंग से और समानुभूति के साथ सोचने वाले ऐसे नेतृत्वकर्ता कहाँ से मिलेंगे जो बिना पूर्वाग्रह के नवाचार कर सकें और एक ऐसे समाज में अपना योगदान दे सकें जो जीवन के हर एक क्षेत्र में निष्पक्षता और विविधता को महत्त्व देता हो।

स्कूल ऐसी योजना बना सकते हैं जो जेंडर को इस्तेमाल करने वाली प्रक्रियाओं और दस्तूरों को रोकें। खेल व संगीत शिक्षकों सहित स्कूल के समस्त क़िरदार अपनी-अपनी योजनाएँ बना सकते हैं। मेरी जेंडर क्लास के कुछ विद्यार्थी, जो शिक्षक बनने का प्रशिक्षण ले रहे हैं, कक्षा के ढर्रे को देखने के बाद बदलावों की योजना बनाते हैं। कभी-कभी वे जेंडर-आधारित रूढ़-छवियों को चुनौती देने, समावेश को बढ़ावा देने और जेंडर-निष्पक्ष जैसे विषयों वाली इकाई योजनाएँ बनाते हैं। इसके लिए अपनाई जाने वाली युक्तियों में समुदाय की महिलाओं को कक्षा में आमंत्रित करना, मीडिया विश्लेषण (कोई विज्ञापन क्या सन्देश लिए रहता है?) के इर्द-गिर्द चर्चाएँ आयोजित करना, महिला कवियों पर ध्यान केन्द्रित करना, रोल प्ले (भूमिका निर्वाह) गतिविधियाँ करना और जीवनियों के प्रोजेक्ट तैयार करना वग़ैरह शामिल होती हैं।

जेंडर के दायरे

स्कूलों में, उपस्थित बच्चों की संख्या के कारण ही जेंडर की श्रेणी उभरती है। इससे नारीत्व या पुरुषत्व के एक सामूहिक

रूप को बल मिलता है। स्कूली ढाँचे, प्रशिक्षण व्यवस्थाएँ और पुरस्कार के पदानुक्रम आक्रामक पुरुषत्व और दब्बू नारीत्व को बढ़ावा देते रहते हैं। स्कूल में लड़कों को दरवाज़ों के निकट बैठाकर और प्रतिस्पर्धी खेलों में उनकी भागीदारी को प्रोत्साहित करके आक्रामक पुरुषत्व को मज़बूती प्रदान करते हैं, साथ ही लड़कियों को शिक्षिका के समीप बैठाकर, उनमें नियमों व रूढ़ियों का अनुपालन करने वाले आचरण, सहयोगात्मक गतिविधियों और सहायक भूमिकाओं को प्रोत्साहित करके नारीत्व की भावना को बढ़ावा देते रहते हैं।

स्कूल के दौरों के दौरान, मैंने अकसर देखा है कि जब शिक्षक जेंडर इलाक़ों की जान-बूझकर की गई व्यवस्था को तोड़ने की कोशिश करते भी हैं, तो बच्चे ख़ुद ही अपने रिवाज़ी जेंडर-आधारित व्यवहारों पर लौट जाते हैं। बच्चे जेंडर से जुड़ी व्यवस्थागत तब्दीलियों पर सवाल उठाते हैं, उनका विरोध करते हैं और जेंडर से जुड़े रूढ़िबद्ध व्यवहारों को ही पुनरुत्पादित करते हैं। उदाहरण के लिए, लड़कियाँ क्लास को शिक्षिका की अनुपस्थिति में शान्ति बनाए रखने की याद दिलाती रहती हैं। कुछ लड़कियाँ ख़ुद ही अपने ऊपर 'बात करने वाले' विद्यार्थियों की सूची बनाने की ज़िम्मेदारी ले लेती हैं। वे सिर्फ़ क्लास की निगरानी ही नहीं कर रही होतीं बल्कि 'अच्छी, अनुशासित लड़कियों' के रूप में ख़ुद की निगरानी भी कर रही होती हैं।

स्कूल बार-बार "सभी बच्चे फुटबॉल खेल सकते हैं" जैसी बातें करके जेंडर श्रेणियों के महत्त्व को कम करने का प्रयास कर सकते हैं। इसके साथ ही स्कूलों को लड़कियों को समर्थ भी बनाना चाहिए : "हमारे यहाँ लड़कियों की क्रिकेट टीम है और हमें उन्हें अपने कौशल को तराशने के लिए समय देना होगा"; "ऐतिहासिक रूप से हमने लड़कियों को कक्षा में या खेल के मैदान पर नेतृत्व करने का मौक़ा नहीं दिया है – क्या कोई लड़की स्पोर्ट्स टीम का नेतृत्व कर सकती है?"; "अगर नियमित और पूरा मन लगाकर अभ्यास किया जाए तो कोई भी तेज़ भाग सकता है"; और लड़के-लड़कियों, दोनों को ही फ़र्नीचर उठाने, उपस्थिति रजिस्टर को सम्भालने आदि कामों के लिए बुलाया जा सकता है।

खेल मैदान में लड़के और लड़कियाँ

स्कूल में खेल का मैदान ऐसा स्थान होता है जहाँ लड़के, जो बड़े समूहों में होते हैं, अकसर मैदान के बीच की जगह पर क़ाबिज़ हो जाते हैं और लड़कियाँ, जो दो-तीन के गुट में होती हैं, अकसर किनारों पर रह जाती हैं – या तो चहलक़दमी करते या बात करते हुए। इस तरह की प्रशंसा कि "अरे! तुम लड़की होकर भी इतना तेज़ भागती हो!" भी लड़कियों के पूरे वर्ग का अवमूल्यन करती है। आइए हम अलग-अलग स्कूलों में खेल के मैदानों पर किए गए अवलोकनों से निकले कुछ अवसरों पर नज़र डालते हैं और देखते हैं कि किस तरह रूढ़-छवियों को चुनौती दी गई थी।

दिल्ली के एक ग़ैर-सरकारी प्राथमिक स्कूल में, जहाँ मैं पर्यवेक्षक थी और अपने शोध के लिए विवरण इकट्ठा कर रही थी, शारीरिक शिक्षा के पीरियड के बाद क्लास बैठी थी। एक शिक्षक ने उनसे पूछा, "आज तुम लोगों ने क्या खेला?" "फुटबॉल, सर!" तुरन्त ही जवाब आया। शिक्षक की प्रतिक्रिया भी स्वतः ही सामने आई, "बढ़िया! लड़कियों ने क्या किया?" एक लड़की बोली, "सर, मैं कप्तान थी!"

एक 10 साल की बच्ची बोली, "मेरी क्लास खो-खो खेल रही है। मैं भी खेलती, लेकिन मुझे चोट लगने का डर है।" शिक्षक बोले, "चोट लगने को लेकर तुम्हारी चिन्ता को मैं समझता हूँ और ऐसा महसूस करने में कुछ ग़लत नहीं है। अभी के लिए, जाओ थोड़ा खेलो।"

एक प्राथमिक स्कूल में प्रशिक्षु के रूप में मौजूद एक छात्र-शिक्षिका ने बताया कि एक लड़का उसके पास आया और बोला, "मैडम, मैं भी दौड़ूँगा! मुझे एक मौक़ा दें। आप मुझे लड़कियों (जो शुरुआती बिन्दु पर खड़ी थीं) के पीछे खड़ा कर सकती हैं, उनसे बहुत पीछे। इसके बाद भी आप देखना मैं उन सबको पीछे छोड़ दूँगा।" शिक्षिका बोलीं, "तुम्हारे उत्साह की दाद देती हूँ! लेकिन अभी के लिए, हम दूसरों का उत्साह बढ़ाएँगे और उनके तेज़ दौड़ने की सराहना करेंगे!"

एक शहरी क्षेत्र के प्राथमिक स्कूलों में हमने पाया कि 8-10 साल की उम्र के छोटे-छोटे लड़के-लड़कियों को भी दौड़ के दौरान पृथक समूहों में रखा जाता है। लड़कियाँ सिर्फ़ अन्य लड़कियों के साथ प्रतिस्पर्धा करती हैं और लड़के अन्य लड़कों के साथ। जब लड़के दौड़ते थे तो हर कोई उनका उत्साह बढ़ाता था, लेकिन जब लड़कियाँ दौड़ती थीं तो सिर्फ़ कुछ लड़कियाँ ही उनका उत्साह बढ़ाती थीं। ऐसी ही एक दौड़ के दौरान शिक्षक ने लड़कियों को ज़ोर-से आवाज़ लगाकर कहा, "सावधानी रखना!" और "ज़रा ध्यान से!" एक लड़की ने उतनी ही ज़ोर-से जवाब दिया, "कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता! मुझे तो मज़ा आ रहा है!"

एक उच्च माध्यमिक स्कूल के खेल के मैदान में लड़कियाँ खो-खो खेल रही थीं। एक लड़की जीत रही थी और जल्दी ही एक लड़का चिल्लाया, "अरे मैडम! पहले अपना दुपट्टा तो सम्हाल लो।" दूसरे बच्चे हँसने लगे। वह लड़की सचेत हो गई और परिणामस्वरूप उसके प्रदर्शन में गिरावट आ गई। अगली क्लास में, शिक्षक ने यह सुनिश्चित किया कि हर कोई ऐसे कपड़ों में खेल सके जो खेल में बाधा न डालते हों।

किसी का उपहास बनाना उनके लिए एक परोक्ष दबाव पैदा कर देता है और उपमाएँ, तिरस्कार व फ़तवे आत्म-सम्मान को प्रभावित करते हैं। हम उपहास को कैसे रोक सकते हैं? ऐसे कुछ तरीक़े हैं जो बच्चों के बीच की अन्तःक्रियाओं में संवेदनशीलता लाने में मदद कर सकते हैं। जैसे डराने-धमकाने के विरुद्ध सख़्त नियम बनाना, सचेत होकर सुनने का प्रशिक्षण, बच्चों को पहनावे के बारे में कम सचेत बनाना और इस बारे में ज़्यादा सचेत बनाना कि वे क्या कह रहे हैं और शब्दों के महत्त्व और प्रभाव के बारे में खुलकर बात करना।

काम का जेंडर-आधारित बँटवारा

कक्षा की बात करें तो लड़के फ़र्नीचर उठाते हैं और गेट खोलते हैं, जबकि लड़कियाँ वितरण के कार्यों को सम्हालती हैं, शिक्षक को सहयोग देती हैं और रिकार्डों को सम्हालती हैं। इस तरह का बँटवारा समाज द्वारा उन्हें दी गई भूमिकाओं को दर्शाता है। लड़कियाँ कार्यकुशलता और देख-रेख पर ध्यान केन्द्रित करती हैं, नोट्स बनाती हैं, कार्यक्रमों की योजनाएँ बनाती हैं, जबकि लड़कों को नेताओं के रूप में चुना जाता है और नेतृत्व की भूमिकाएँ लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है, जैसे क्लास मॉनीटर या टीम का कप्तान।

लड़कों को सार्वजनिक भूमिकाओं, नेतृत्व और औपचारिक कार्यों के लिए प्रशिक्षित किया जाता है, जबकि लड़कियों को घरेलू एवं देखभाल के कार्यों तक सीमित कर दिया जाता है जिन्हें कमतर मूल्य का माना जाता है और उनके लिए कम मेहनताना मिलता है। अलग-अलग सामाजिक वर्गों में जेंडर भूमिकाओं का विभाजन ज़्यादा स्पष्ट रूप से अलग-अलग होता है। निम्न वर्गों की लड़कियों से अपेक्षा की जाती है कि वे घरेलू ज़िम्मेदारियाँ सम्हालें और वयस्कों के रूप में रोज़गार हासिल करने के लिए बुनियादी कौशल सीखें, जबकि उच्च वर्ग की लड़कियों को सफल पुरुषों की जीवनसाथी बनने के लिए तैयार किया जाता है और घरेलू व नेतृत्व-सम्बन्धी, दोनों ही भूमिकाओं के लिए प्रशिक्षित किया जाता है। मैंने एक स्कूल में एक वाद-विवाद में भाग लिया था जहाँ एक लड़की द्वारा अपने तर्क सामने रखने के बाद संचालक ने कहा, "आपने सुना इसने कितनी सौम्यता और कोमलता से अपनी बात कही? लड़कियों को इस तरह वाद-विवाद करते सुनना कितना अच्छा लगता है!" इस तरह, नेतृत्व की भूमिका के लिए प्रशिक्षित करते हुए भी इस लड़की और सभी श्रोता लड़कियों को यह याद दिलाया जाता है कि उन्हें 'स्त्रियों जैसा' होना है। मज़े की बात यह थी कि वहाँ जजों की पूरी टीम ऐसी सफल महिलाओं से बनी थी जिन्होंने लड़कों की तारीफ़ सौम्यता के लिए की और लड़कियों की अपनी बात पर दृढ़ रहने के लिए!

श्रम के इस विभाजन का एक और पहलू सेवा के विचार से जुड़ा हुआ है – समाज में लड़कियों की भूमिका देखभाल और पालन-पोषण करने की है। अकसर यह दलील दी जाती है कि सभी महिलाएँ/ लड़कियाँ स्वाभाविक रूप से मैत्रीपूर्ण और दूसरों की परवाह करने वाली होती हैं और दूसरों की ज़रूरतों को ख़ुद की ज़रूरतों से पहले रखती हैं। ऐसी दलीलों में एक बुनियादी दोष है। ये सामाजिक भूमिकाएँ हैं, किसी ख़ास जैविक श्रेणी से बँधी नहीं हैं।

जिस तरह यह दावा हास्यास्पद है कि लम्बे लोग बेहतर निर्णय लेते हैं, उतना ही अतार्किक यह दावा है कि सभी लड़कियाँ स्वाभाविक रूप से ज़्यादा परवाह करने वाली और भावुक होती हैं व सभी लड़के ज़्यादा तार्किक और व्यावहारिक होते हैं।

लड़के-लड़कियाँ, दोनों स्कूल व समाज में अपनी भूमिकाओं को इस आधार पर समझते व स्वीकारते हैं कि उन्हें किन बातों के लिए महत्त्व दिया जा रहा है। अपने कार्यों का बोध धीरे-धीरे आत्मसात किया जाता है। लड़कियों के मन में सम्भवतः इस तरह के संवाद चलते होंगे, "शिक्षक बात मानने के लिए, विरोध न करने के लिए और आज्ञाकारी होने के लिए मेरा मोल करते हैं; मैं उन कामों को करने के लिए पहचानी जाऊँगी और मेरा महत्त्व होगा जो स्कूल को ज़्यादा कुशलतापूर्वक चलाने में मदद करते हैं।" स्कूल ऐसी परिस्थितियाँ बना देते हैं जहाँ लड़कियाँ अनुशासित, आज्ञाकारी और बातें मानने वाली विद्यार्थियों के रूप में अपनी भूमिकाओं को स्वीकार कर लेती हैं। यह पैटर्न तब टूटता है जब बच्चों को बातों को स्वीकार व अस्वीकार करने, आज्ञाकारी और अनियंत्रित होने, अनुशासित और बातूनी होने का अवसर दिया जाएगा। कोई शिक्षक चुपचाप रहने के लिए किसी लड़के की या दबंग होने के लिए किसी लड़की की तारीफ़ कर सकता है और इस तरह, कक्षा में सम्मान के भाव और सुनने की क्षमता के साथ सभी प्रकार के व्यवहारों के लिए जगह बनाई जा सकती है।

लड़के-लड़कियों, दोनों को शिक्षकों व साथियों की मदद करने के लिए बराबरी से बुलाया जा सकता है; लड़के-लड़कियों दोनों को कक्षा की स्वच्छता और रखरखाव से जुड़े काम सौंपे जा सकते हैं। सभी प्रतिस्पर्धी खेलों में मिश्रित जेंडरों वाली टीमें होनी चाहिए और दोनों जेंडरों को दृढ़ता और आत्म-विश्वास विकसित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

शिक्षक-विद्यार्थी अन्तःक्रियाएँ

स्कूल का एक और महत्त्वपूर्ण पहलू है शिक्षक-विद्यार्थी अन्तःक्रियाएँ। आइए हम इन धारणाओं को समझने और इनकी पड़ताल करने के लिए कक्षा की कुछ घटनाओं पर नज़र डालें।

एक क्लास में विद्यार्थी धमाल मचा रहे हैं। शिक्षिका लड़कियों को कहती हैं, "बात क्यों नहीं सुनती हो? ठीक से व्यवहार क्यों नहीं कर रही हो?" वह लड़कों को कहती हैं, "तुम लोग गम्भीरता क्यों नहीं दिखा रहे? अगर तुम गम्भीर नहीं होगे तो पैसा कैसे कमाओगे और अपने परिवार को सहारा कैसे दोगे?"

अकसर, लड़कियों को बात न मानने के लिए, आज्ञाकारी न होने के लिए डाँटा जाता है। जबकि हल्ला मचाने वाले ढीठ लड़कों को यह कहते हुए डाँटा जाता है कि उन्हें गम्भीर व ज़िम्मेदार होना चाहिए।

किसी परीक्षा में एक लड़की और एक लड़के को बराबर अंक मिलते हैं। शिक्षिका लड़की से कहती हैं, "बहुत बढ़िया! तुमने मेहनत की!" लड़के से कहा जाता है, "तुमने ठीक किया! तुम्हारे सभी सूत्र ग़लत थे, लेकिन तुम कुशाग्र हो और इससे बेहतर कर सकते हो।"

जेंडर पर आधारित अन्तर्निहित सन्देशों में बारीक़ अन्तर होते हैं। लड़कियों को बताया जाता है कि उनका मोल उनके 'काम', प्रयास और इस आधार पर किया जाता है कि उन्होंने कितना समय दिया। लड़कों को बताया जाता है कि वे अच्छा दिमाग़ और योग्यता रखते हैं और उनके भीतर 'सम्भावना' और 'क्षमता' है।

शिक्षकों को इस तरह का फ़ीडबैक देने के लिए प्रशिक्षित किया जा सकता है जो व्यक्तिगत प्रयास और क्षमताओं पर केन्द्रित हो। लड़के-लड़कियों की उतनी ही प्रशंसा उनकी तार्किक सोच, समस्या सुलझाने के कौशलों के लिए की जा सकती है जितनी कि उनके परिश्रम और कर्मठता के लिए। हम मन-ही-मन चल रहे उन आन्तरिक संवादों को किस तरह बदल सकते हैं जिन्हें लड़के-लड़कियाँ, दोनों अपनी क्षमताओं के बारे में आत्मसात कर लेते हैं? कक्षाओं के भीतर ऐसे सुरक्षित स्थान बनाकर जहाँ बच्चे अपने डरों को बयाँ कर सकें, उन्हें पहचान सकें और इस बात से बे-परवाह होकर अपने भविष्य की योजना बना सकें कि उनका जेंडर क्या है। इस तरह लड़के-लड़कियों, दोनों को समर्थ बनाया जा सकता है।

अन्त में

जेंडर ऐसी हक़ीक़त है जो स्कूली संस्कृति में सर्वत्र व्याप्त है। यह रोज़ाना के स्कूली जीवन के हर पहलू को प्रभावित करता है जिसमें पाठ्यचर्या की विषयवस्तु, शिक्षक-विद्यार्थी अन्तःक्रियाएँ, पाठ्येतर गतिविधियाँ, खेल और सामाजिक प्रक्रियाएँ शामिल होती हैं। कक्षा की प्रक्रियाएँ और छिपी हुई पाठ्यचर्या जेंडर से जुड़ी प्रचलित धारणाओं को तोड़ने की बजाय उन पर और बल देती हैं। शिक्षकों, स्कूल के नेतृत्व और स्कूल के सभी क़िरदारों को इस बात के प्रति जागरूक होना चाहिए कि स्कूल की संस्कृति और स्कूल के अनुभव विद्यार्थियों के लिए अर्थ पैदा करते हैं। बदलाव लाने के लिए आगे बढ़ने का रास्ता है स्कूल में अपनी रोज़ की क्रियाओं, प्रक्रियाओं और व्यवहारों में सोच-विचार को शामिल करना। इस बात को समझना सबसे ज़रूरी है कि किसे क्या करने के लिए कहा जा रहा है। कौन क्या कर रहा है? बहुत सचेत होकर स्कूल के सभी क़िरदारों को इस बात के लिए प्रतिबद्ध होना चाहिए कि सभी भूमिकाओं को जेंडरों के बीच नए सिरे से बाँटा जाए।

निधि गुलाटी दिल्ली विश्वविद्यालय में शिक्षक-शिक्षा की प्राध्यापक हैं। वे फील्ड, नीति व शिक्षणशास्त्र के स्तरों पर शिक्षा से जुड़ी हुई हैं। उनका शोध का क्षेत्र बच्चों की ज़िन्दगियों और उनके सीखने, स्कूली शिक्षा के पहलुओं, शिक्षक की पहचान, लोकप्रिय संस्कृति और बचपन की प्रकृति जैसे विषयों के मिलन बिन्दु से सम्बन्धित है। वे विभिन्न पाठ्यक्रम, नीति और शिक्षक-शिक्षा सुधार समितियों की सदस्य रही हैं। वे नियमित रूप से बच्चों के लिए फ़िल्मों की समझ और विश्लेषण पर निकलने वाले एक स्तम्भ में लिखती रहती हैं। उनसे nidhi.a.gulati@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : भरत त्रिपाठी **पुनरीक्षण :** सुशील जोशी **कॉपी एडिटर :** अनुज उपाध्याय